International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 03-01-2021; Accepted: 19-02-2021; Published: 18-03-2021
www.hindijournal.com
Volume 7; Issue 2; 2021; Page No. 42-48

21वीं सदी के रामकथा पर आधारित हिंदी उपन्यासों का समकालीन सन्दर्भ

सतीश चन्द्र सि

शोधार्थी हिंदी विभाग, तमिलनाडु केंद्रीय विश्वविद्यालय, तिरुवरुर, तमिलनाडु, भारत

सारांश

२१वीं सदी का समय सूचना क्रांति, वैज्ञानिकता एवं तार्किकता का समय है। साहित्य के क्षेत्र में यह वैचारिकता और विमर्शों का समय रहा है जिसके परिणाम स्वरुप आदिवासी विमर्श, दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, किन्नर विमर्श, पर्यावरण विमर्श, किसान विमर्श, विकलांग विमर्श आदि नये-नये विमर्शों का आगमन हुआ है। इन सभी विमर्शों के दौर में भी पौराणिक कथाएँ अपना एक अलग महत्त्व रखता हैं जो हमारी सांस्कृतिक धरोहर के रूप में विद्यमान है। पौराणिक कथाएँ साहित्य को हमेशा प्रभावित करती आयी है। भारतीय साहित्य पौराणिक कथाओं से मुक्त नहीं रहा, हिंदी साहित्य भी इसका अपवाद नहीं रहा है। भारतीय साहित्य में हिंदी साहित्य की जितनी विशालता और प्रधानता है उसी मात्रा में पौराणिक कथाओं का महत्व भी हिंदी साहित्य में है।

रामकथा भारतीय साहित्य का एक महत्वपूर्ण अध्याय है जो समाज को हमेशा दिशा निर्देश करता आया है। रामकथा केवल एक पौराणिक कथा ही नहीं बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, पारिवारिक, धार्मिक, साहित्यिक आदि मूल्यों की महागाथा है। वही साहित्य जीवित रहता है जो समय के समय के अनुसार अपनी प्रासंगिकता बनाये रखता है। इस दृष्टिकोण से रामकथा आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी कि पहले थी| इसलिए साहित्यकारों ने रामकथा के विभिन्न प्रसंग एवं पात्रों के माध्यम से समकालीन समस्याओं को उजागर करने में सफल रहे है।

मूलशब्द: पौराणिक, समकालीन, समस्याएँ, प्रासंगिकता, संस्कृति, साहित्य, समाज, महत्वपूर्ण, भारतीय

प्रस्तावना

समय परिवर्तनशील है, समय के परिवर्तन के साथ-साथ मनुष्य की सोच, दृष्टिकोण, विचारधारा, उसकी आवश्यकताएँ, अपेक्षाएँ, मान्यताएँ हमेशा बदलती रहती हैं। इसी बदलाव के कारण ही सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक तथा जीवन मूल्यों में परिवर्तन आता है। इस परिवर्तनशील प्रक्रिया में साहित्य भी समय की मांग के अनुरूप बदल रहा है। साहित्य की दृष्टि से २१वीं सदी का समय गद्य का समय रहा है, जिसमें उपन्यास, कहानी, नाटक प्रमुख हैं, साथ ही अनेक कथेतर विधाओं का विकास भी इसी सदी में हुआ है, जिसमें संस्मरण, यात्रा वृतांत, आत्मकथा, जीवनी आदि आते हैं। अतः यह कह सकते हैं कि साहित्य के क्षेत्र में यह एक नवीन संक्रमण का समय है। यह समय केवल विधाओं के माध्यम से ही नवीनतम नहीं है बल्कि विचारधाराओं के माध्यम से भी नवीन रहा है जिसके परिणाम स्वरुप नये-नये विमर्श (दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, स्त्री

विमर्श, किन्नर विमर्श, पर्यावरण विमर्श, विकलांग विमर्श, किसान विमर्श) आज हमारे सामने हैं। आज हम २१वीं सदी में जी रहे हैं, जहां लोग वैश्वीकरण की ओर बढ़ रहे हैं। यह समय सूचनाक्रांति का समय है जहां संचार-प्रौद्योगिकी के माध्यम से मनुष्य ने पूरी दुनिया को अपने मुट्ठी में रखकर 'विश्वगाँव' की परिकल्पना सिद्ध की है, जिसमें विश्वस्तरीय सोच, संपर्क तथा लेनदेन संभव हो पाया है।

२१वीं सदी का समय एक संक्रमण का समय है जहाँ हर क्षेत्र में परिवर्तन नजर आ रहा है। हर देश की अपनी-अपनी सांस्कृतिक पहचान होती है जिससे देश गौरवान्वित अनुभव करता है। रामकथा हमारी संस्कृति की पहचान है। इसका मूल आधार ग्रन्थ आदि कवि वाल्मीकि द्वारा रचित 'रामायण' है, जिसको आधार बनाकर हर भारतीय भाषाओँ में रामायण की रचना हुई, जैसे तमिल में 'कम्ब रामायण', तेलुगु में 'भास्कर रामायण', कन्नड़ में 'कुमुदेन्दु रामायण', असमिया में 'कथा रामायण', ओडिया में 'दण्डि रामायण', बंगला में 'कृतिवास रामायण', पंजाबी में 'गोविन्द रामायण' आदि। इन सभी रामायण से रामकथा का महत्त्व प्रतिपादित होता है। रामकथा की आदर्शवादी चेतना, राष्ट्रीयता एवं विश्व बन्धुत्व की भावना आज भी प्रासंगिक है। इसलिए साहित्य की हर विधाओं में रामकथा को आधार बनाकर नवीन दृष्टिकोण से समकालीन समस्याओं को चित्रित किया जा रहा है। रामकथा ने केवल भारत में ही नहीं बल्कि अन्य देशों में भी अपनी एक अलग पहचान बनाई है, जिसमें नेपाल, तिब्बत, बर्मा, जावा, इंडोनेशिया, थाईलैंड, तुर्किस्तान, रूस, जापान, कम्बोडिया, फिलीपींस आदि आते हैं। अतः रामकथा को वैश्विक स्तर पर जो प्रतिष्ठा और लोकप्रियता मिली है वह उसकी मूल्यवत्ता को सिद्ध करती है। विश्व साहित्य और विश्व इतिहास में राम जैसा अन्य कोई पात्र नहीं हैं जो इतने सारे देशों के साहित्य में अपना स्थान बना पाया हो। रामकथा अपने-आप में एक वैश्विक कथा को जन्म देती है जो केवल एक कथा ही नहीं बल्कि जीवन जीने की एक सार्वभौमिक शैली है। इसमें चित्रित पारिवारिक सम्बन्ध, समता की भावना, प्रेम, सत्य, निष्ठा, कर्तव्य, त्याग, आदर्श आदि मानवीय मूल्यों से विश्व हमेशा से प्रभावित होता आया है। इस कथा के मध्याम से ही भारतीय संस्कृति ने आज विश्व में अपनी अलग सांस्कृतिक पहचान बनाई है।

भारतीय साहित्य के परिपेक्ष्य में रामकथा को देखा जाए तो हर भारतीय भाषाओँ में रामकथा को आधार बनाकर साहित्य का सृजन हुआ है। हिंदी भी इससे अछूती नहीं रही है। हिंदी साहित्य के इतिहास में रामकथा का अपना एक अलग महत्त्व है जिसका प्रमाण आदिकाल से लेकर अब तक की रचनाओं में देखा जा सकता है। आदिकाल में स्वयंभू का 'पउम चरिउ' रामकथा पर आधारित एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है, जिसके कारण उन्हें अपभ्रंश का वाल्मीकि भी कहा जाता है। भक्तिकाल में रामकथा पर आधारित गोस्वामी तुलसीदास कृत्त 'रामचरितमानस' हिंदी साहित्य की एक कालजयी कृति है। इस कृति के मध्याम से तुलसीदास ने तत्कालीन समाज की समस्याओं को चित्रित करने में सफल हुए हैं। यह केवल हिंदी का ही नहीं बल्कि भारतीय साहित्य का एक सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है। इस महाकव्य की कथावस्तु रामकथा पर आधारित है, तथा अवधी भाषा में लिखित होने के कारण उत्तर भारत के जनमानस में इसकी लोकप्रियता देखी जा सकती हैं। अतः यह कह सकते हैं कि उत्तर भारत में वाल्मीकि के 'रामायण' को जितनी लोकप्रियता नहीं मिली उससे कहीं ज्यादा तुलसीदास के 'रामचरितमानस' को मिली है। इस ग्रन्थ की लोकप्रियता के बारे में 'श्रीरामचरितमानस' की भूमिका में लिखा है कि 'श्रीरामचरितमानस' का स्थान हिंदी साहित्य में ही

नहीं, जगत के साहित्य में निराला है। इसके जोड़ का ऐसा ही सर्वांग सुन्दर काव्य के लक्षणों से युक्त साहित्य के सभी रसों का आस्वादन करनेवाला, काव्यकला के दृष्टि से भी सर्वोच्च कोटि का तथा आदर्श गार्हस्थ्य-जीवन, आदर्श राजधर्म, आदर्श पारिवारिक जीवन, आदर्श पतिव्रत धर्म, आदर्श भ्रातृधर्म के साथ-साथ सर्वोच्च भक्ति, ज्ञान, त्याग, वैराग्य तथा सदाचार की शिक्षा देनेवाला... कोई दूसरा ग्रन्थ हिंदी भाषा में ही नहीं, कदाचित् संसार की किसी भाषा में आजतक नहीं लिखा गया ।"[1]

रीतिकाल मुख्यतः आचार्यों और कवियों का युग था जहाँ एक तरफ लक्षण ग्रंथों की रचना हो रही थी तो दूसरी तरफ दरवारी काव्यों की। ऐसी परिस्थितियों में रामकथा को लेकर अनेक काव्यों की रचना हुई, इनमें जानकी रसिक शरण का 'अवध सागर', जनकराज किशोरी शरण का 'सीताराम रस तरंगिनी', 'जानकी करुणा भरण', नवल सिंह का 'रामचंद्र विलास', 'सीता स्वयंवर' आदि प्रमुख हैं।

आधुनिक काल मुख्यतः गद्य का समय रहा है, जिसमें उपन्यास, कहानी, नाटक आदि प्रमुख विधा के रूप में सामने आये हैं। इन सभी विधाओं ने रामकथा के माध्यम से समकालीन समस्याओं को चित्रित किया हैं, जिसके कारण रामकथा की महत्ता ओर भी बढ़ने लगी। २१वीं सदी विज्ञान तथा तकनीकि का युग है, साहित्य के क्षेत्र में यह विमर्शों का युग है जिसमें दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, स्त्री विमर्श, किन्नर विमर्श, किसान विमर्श आदि आते हैं। इन सारे विमर्शों का मूल उद्देश्य समाज में अपने वर्ग के लागों का अस्तित्व और अस्मिता को बनाए रखना है। इन सभी विमर्शों के बावजूद भी रामकथा पर आधारित पौराणिक उपन्यास अपना एक अलग महत्त्व रखता है। भारतीय पुराकथाएं अपनी काजलयी चेतना के कारण सहस्त्रों वर्षों से भारतीय साहित्य की समस्त विधाओं में किसी-न-किसी रूप में विद्यमान रहीं हैं। भारतीय आधुनिक हिन्दी उपन्यास भी पौराणिक रचनाओं के मोह से खुद को मुक्त रखने में अक्षम रहा है। इस बारे में के.सी.सिन्धु अपनी पुस्तक 'रामकथा कालजयी चेतना' में लिखती हैं कि "जब आधुनिक युग के किसी साहित्य में पुराकथा को स्थान दिया जाता है तो उसकी महानता उस कथा को उसी प्रकार अलौकिक और चमत्कारिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने में नहीं है बल्कि युग चेतना को संवाहक बनाने में है।"[2] अतः यह कह सकते हैं कि पौराणिक कथाएँ हमारी सांस्कृतिक पहचान हैं, इसलिए वर्तमान समय में पौराणिक कथाओं को केवल प्रतीकात्मक रूप में प्रयोग करके समसामयिक समस्याओं की ओर लोकमानस को आकर्षित किया जा रहा है। अतः यह कह सकते हैं कि पौराणिक कथाएँ आज पौराणिक न होकर अपने आप में समसामयिक और आधुनिक हैं।

रामकथा को आधार बनाकर उपन्यास लिखनेवाले समकालीन उपन्यासकारों में नरेन्द्र कोहली का प्रमुख स्थान है। उन्होंने राम की पुराकथाओं को नवीन कलेवर देकर प्रासंगिकता के साथ प्रस्तुत करके हिन्दी उपन्यास जगत को एक नवीन आयाम प्रदान किया है। राम की पौराणिक कथा पर आधृत उनकी 'दीक्षा', 'अवसर', 'संघर्ष की ओर' एवं 'युद्ध' उपन्यास; 'अभ्युदय' के दो भागों में संकलित है। इन सारे उपन्यासों की कथाएं पौराणिक होते हुए भी यथार्थ की पृष्ठभूमि पर समकालीन समस्याओं को चित्रित करने में सफल हुईं हैं। इसी परम्परा में भगवान सिंह का 'अपने-अपने राम' आशा प्रभात का 'मैं जनक नंदिनी', गिरिराज किशोर का 'आंजनेय जयते' आदि २१वीं सदी के रामकथा पर आधारित प्रमुख उपन्यास हैं। इन सारे उपन्यासों की कथावस्तु पौराणिक होते हुए भी इन्हीं कथाओं के माध्यम से समकालीन समस्याओं का यथार्थ चित्रण करने में सफल हुईं हैं।

'आंजनेय जयते' हिंदी के प्रसिद्ध उपन्यासकार गिरिराज किशोर द्वारा रचित उनका पहला मिथकीय उपन्यास है। इस उपन्यास के माध्यम से उपन्यासकार ने आंजनेय यानी हनुमान के जीवन संघर्ष या जीवन गाथा को एक नए सन्दर्भ में प्रस्तुत किया है। आंजनेय एक ऐसा मिथकीय पात्र है जो भारतीय जनमानस में बजरंगबली, संकटमोचन, पवनसुत, हनुमान आदि नामों से परिचित है। वे रामायण के एक अमर पात्र हैं, जबतक समाज में रामकथा की चर्चा होती रहेगी तबतक आंजनेय की गाथा भी जीवित रहेगी। रामकथा में आंजनेय एक ऐसी संजीवनी है जो रामकथा को हमेशा जीवंतता प्रदान करती रहेगी।

भारतीय साहित्य में पौराणिक साहित्य का बहुत बड़ा योगदान रहा है। साहित्य को समृद्ध तथा समाज को नयी दिशा एवं व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण में पौराणिक एवं मिथकीय पात्रों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। हिन्दी साहित्य में मिथकीय कथाओं या मिथकीय पात्रों को लेकर अनेक रचनाएँ हुई है। आंजनेय को लेकर भी अनेक काव्य, नाटक, उपन्यासों की रचना हुई है| उन सभी रचनाकारों ने आंजनेय को उसी पारंपरिक रूप (वानर) में प्रतिष्ठित किया है। लेकिन पहली बार उपन्यासकार गिरिराज किशोर ने हनुमान को पारंपरिक रूप से हटाकर अंजनी पुत्र आंजनेय को एक साधारण आम आदमी के रूप में परिचित कराया है| जो जंगल में रहने के कारण वनवासी आदिवासी, गिरिजन, एवं मूलनिवासी के नाम से जाने जाते हैं।

'आंजनेय जयते' उपन्यास के नामकरण को देखें तो हमारे सामने अनेक प्रश्न उपस्थित होते हैं। आखिर उपन्यासकार ने उपन्यास का नाम 'आंजनेय जयते' ही क्यों रखा? अगर वह चाहते तो पवनसुत या पवनपुत्र, या महाबली हनुमान भी रख सकते थे। ऐसा नाम रखने के पीछे उपन्यासकार का क्या उद्देश्य रहा होगा इसको समझना आवश्यक है। उपन्यासकार ने हनुमान के चरित्र को हिंदी साहित्य जगत में एक नए रूप में स्थापित करने का प्रयास किया है, जो पारंपरिक रूप से पूरी तरह से भिन्न है। 'आंजनेय' के शाब्दिक अर्थ को देखें तो ज्ञात होता है कि माता अंजनी के पुत्र होने के कारण आंजनेय नाम रखा गया है। अर्थात यहाँ माता के नाम के अनुरूप ही 'आंजनेय' नाम रखा गया है। यहाँ उपन्यासकार की स्त्रीवादी दृष्टिकोण को समझ सकते हैं।

हमारा समाज शुरू से पुरुषसत्तात्मक समाज रहा है| कहने का तात्पर्य यह है कि समाज में हमेशा पुरुषों का ही आधिपत्य रहा है, जिसमें पुरुषों के नाम से ही स्त्रियों की पहचान होती आई है। यह प्रथा पौराणिक काल से चली आ रही है| समाज का सर्वोच्च अधिकार पुरुषों के नाम से ही रहा है, चाहे वह राज्य शासन का अधिकार हो, परिवार का अधिकार हो या संतानों की पहचान का अधिकार हो, पिता के नाम से होता आया है जो आज भी प्रचलित है, जैसे - कर्ण को हमेशा सुर्यपुत्र के नाम से याद किया जाता है न की कुंती पुत्र, उसी तरह पांडवों को राजा पांडु के नाम के आधार पर पाण्डव कहा जाता है। दशरथ पुत्र राम आदि अनेक ऐसे उदहारण मिल जायेंगे जो हमारे पौराणिक कथाओं में विद्यमान है। आज के वैचारिक दौर में भी पुरुषसत्तात्मक समाज का प्राधान्य रहा है जैसे किसी के बेटे या बेटी को उसके पिताजी के नाम से ही जाना जाता है न की माताओं के नाम से। लेकिन उपन्यासकार ने समाज की उसी सोच को बदलने का प्रयास किया है| इसीलिए इस उपन्यास का नाम माता अंजना के नाम स्वरूप 'आंजनेय' रखा गया है। यह उपन्यासकार का एक अभिन्न प्रयोग है जिसमें पुरुषसत्तात्मक समाज में स्त्रियों के अधिकारों का भी ध्यान रखा गया है।

'आंजनेय जयते' उपन्यास की कथावस्तु रामायण के अमर पात्र अंजनीपुत्र आंजनेय (हनुमान) के

जीवन संघर्ष पर आधारित है। रामकथा में आंजनेय को हमेशा हनुमान के रूप में चित्रण किया गया है, लेकिन उपन्यासकार ने उन सभी पारंपरिक मान्यताओं को तोड़ कर उनकी सही पहचान कराने में सफल हुआ है। उपन्यासकार ने आंजनेय को जंगल में रहने वाले एक वनवासी अर्थात एक साधारण मनुष्य के रूप में स्थापित किया है जोकि वानर वंश के थे। इस संबंध में उपन्यास में आंजनेय अपने बारे में खुद बताता है कि "मैं न मरकट हूँ, न बन्दर। वानर वंश का अवश्य हूँ। जाम्बवान भी रीछ नहीं हैं। उनका जातीय समाज... जैसे मैं वानर गोत्र से हूँ, वैसे ही वे भी रक्ष हैं। वनवासी होने के कारण पशु-पक्षियों के नाम पर पूर्वजों ने अपने वंश के नाम रखे थे। वाल्मीकि आदिकवि ने यह बात स्पष्ट नहीं की कि हम वनवासी भी मनुष्य हैं, केवल पहचान के लिए पशु-पक्षियों का नाम धारण कर लिया। बाद में वंशों के नाम से जोड़कर सब लोगों ने हमारी शक्लें भी वैसी बना दीं|"[3] उपन्यासकार ने हनुमान को एक साधारण मनुष्य जो वन में वास करने के कारण वनवासी या आदिवासी कहा गया है, को अपने समय का एक प्रख्यात विद्वान, शास्त्र ज्ञाता, राजनीतिज्ञ तथा बलशाली पुरुष के रूप में चित्रित किया है। वह अपनी दक्षता के बल पर वानर राज सुग्रीव के मंत्री बने थे। अतः उपन्यासकार आंजनेय के माध्यम से एक तरफ अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए लड़ रहे आदिवासी, दलित, स्त्री, किन्नर समुदाय का समर्थन कर रहा है, तो दूसरी तरफ जाति, धर्म, वर्ण, लिंग के भेद-भाव को भुलाकर योग्यता के आधार पर ही कर्म क्षेत्र में नियुक्ति हो इसका समर्थन करता है। इन सारी समसामयिक समस्याओं को उपन्यासकार ने मिथकीय पात्र आंजनेय के माध्यम से यथार्थ रूप में चित्रित किया है।

उपन्यासकार ने इस उपन्यास में आंजनेय की निष्ठा, समर्पण, मित्रता और भक्तिभाव का अद्भुत् परिचय दिया है जो आज के समाज में कम होता नजर आ रहा है। जब राम और सुग्रीव माता सीता की खोज के लिए आंजनेय को चुनते हैं, तब वह अपना जीवन को प्रभु श्रीराम की सेवा में समर्पित करते हुए सीता की खोज में लंका नगरी जाते हैं और सफल हो कर वापस आते हैं| तबी राम आंजनेय को गले लगा लेते हैं इस संबंध में उपन्यासकार लिखता है कि "श्रीराम उठे और आंजनेय को दोनों भुजाओं में लेकर हृदय से लगा लिया और बोले, आंजनेय मैं तुम्हारे इस उपकार से कभी अऋण नहीं हो सकता । तुम मेरे परम प्रिय भक्त ही नहीं मित्र भी हो।"[4] इससे यह स्पष्ट होता है कि आंजनेय अपने कार्य के प्रति निष्ठावान और समर्पित हैं। आज समाज में स्वार्थ, शत्रुता, भेद-भाव, अहंकार आदि अमानवीय मूल्यों को बढ़ते हुए देख कर उपन्यासकार ने आंजनेय के चरित्र के माध्यम से निष्ठा, समर्पण, भक्ति, सदाचार, प्रेम, आदर्श आदि मानवीय मूल्यों को पुनः स्थापित करने का सन्देश दिया है।

इसी क्रम में 'मैं जनक नंदिनी' आशा प्रभात द्वारा रचित एक स्त्री विमर्शीय उपन्यास है। जनक नंदिनी अर्थात सीता हैं, जिनको अनेक नामों से जाना जाता है, जैसे-जानकी, मैथिली, भुमिपुत्री, वैदेही आदि। इस उपन्यास की कथावस्तु जनक नंदिनी अर्थात सीता के जीवन-व्यथा की गाथा है। इस उपन्यास में उपन्यासकार ने सीता को उस रूप में चित्रित नहीं किया जिस रूप में वाल्मीकि और तुलसीदास ने किया है। कहने का तात्पर्य यह है कि वाल्मीकि और तुलसीदास ने सीता को उस रूप में चित्रण किया है जिस रूप में राम की मर्यादा बने रहे। लेकिन उपन्यासकार स्वयं एक स्त्री होने के नाते एक स्त्री की मनोव्यथा को भलीभांति समझते हुए सीता के माध्यम से स्त्री के अस्तित्व और अस्मिता के सवाल खड़े किए हैं। सीता एक आज्ञाकारी, गुणी, ज्ञानी तथा सती नारी

है, इसका मतलब यह नहीं कि वह हमेशा अपने पिता या पति की हर बात को स्वीकार करे बल्कि उसका अपना भी एक स्वतंत्र जीवन है, जिसको वह जैसे चाहे जिए, न की दूसरों की इच्छानुसार। पुरुषसत्तात्मक समाज में पुरुष स्त्री को हमेशा अपने अधीन करते आया है। इन सारे प्रश्नों के खिलाफ आवाज उठाते हुए उपन्यासकार लिखती हैं कि "क्या किसी पुरुष ने कभी परामर्श के योग्य समझा है स्त्री को? सम्बन्ध में चाहे वह स्त्री उससे ज्येष्ठ श्रेष्ठ हो, सम हो या कनिष्ठ? सदा अपना मंतव्य ही आरोपित किया है उस पर।... मेरा अस्तित्व क्या है? कर्म, कर्तव्य और नैतिकता के निर्वहन के अतिरिक्त भी मेरे अन्दर कोई और भाव भी होगा। कभी किसी ने यह समझने तक का प्रयत्न नहीं किया? सृष्टि की सारी अपेक्षाएं मात्र मुझसे ही क्यों?"[5] पुरुष हमेशा से स्त्रियों को कमजोर समझते आया है| स्त्री और पुरुष को लेकर समाज में हमेशा भेद-भाव तथा असमानता की भावनाएं रही हैं। इन्हीं भावनाओं का निवारण करने के लिए स्त्री विमर्श आज हमारे सामने है। भले ही आज हम अपने आप को आधुनिक या उत्तरआधुनिक कहते हैं लेकिन क्या स्त्री आज सच में स्वतंत्र है? क्या स्त्री पुरुष के बराबर है? क्या स्त्री सुरक्षित है? ऐसे अनेक सवालों को आशा प्रभात जी ने सीता के माध्यम से उजागर किया है। अतः यहाँ सीता कोई ओलौकिक पात्र नहीं है बल्कि वह एक साधारण स्त्री है जो अपनी मनों व्यथा को प्रकट कर रही है ।

इस उपन्यास में उपन्यासकार ने जनक नंदिनी सीता के मध्याम से स्त्रियों के प्रति पुरुषसत्तात्मक समाज द्वारा हो रहे अन्याय, अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष करते हुए दिखाया गया है। हम सब जानते हैं कि रामायण में लोक अपवाद से राम ने राजधर्म निभाते हुए सीता का परित्याग किया था| यह पुरुषवादी मानसिकता को दर्शाता है लेकिन उपन्यासकार खुद एक स्त्री होने के कारण उस घटना को उस रूप में नहीं देखती है बल्कि एक स्त्रीवादी दृष्टिकोण से देखती है। इसमें उन्होंने ने राम के द्वारा सीता का परित्याग नहीं बल्कि सीता के द्वारा राम का परित्याग करते हुए दिखाया गया है। "हे राजा राम आपने राजधर्म निभाया परन्तु पतिधर्म का निर्वाह नहीं कर सके। पति-पत्नी का संबंध राजधर्म का विषय नहीं है। यह मन और विश्वास का सम्बन्ध है। राजधर्म की ओट लेकर आप अपने मन का कलुष छुपा नहीं सकते। अतः आज इस सभा में समस्त समाज के समक्ष जनक नंदिनी जानकी आप का परित्याग करती है...।"[6]

उपन्यासकार ने सीता को एक विद्रोही नारी के रूप में चित्रित किया है जो अपने उपर हो रहे अन्याय और अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाते हुए अपना निर्णय खुद करती है। अतः सीता के माध्यम से उपन्यासकार ने पुरुषसत्तात्मक समाज के प्रति स्त्री विद्रोही स्वर को मुखर किया है।

निष्कर्ष के तौर पर यह कहा जा सकता है कि रामकथा भारतीय साहित्य का एक ऐसा अध्याय है जो समाज को हमेशा पथ प्रदर्शन करता रहेगा| अतः रामकथा राम की कथा नहीं हैं बल्कि उसमें निहित सामाजिक, राजनैतिक, पारिवारिक, सांस्कृतिक, धार्मिक मूल्यों का सुनियोजित समाहार है| हिंदी उपन्यासकारों ने रामकथा के विविध पात्रों के माध्यम से समकालीन समस्याओं को उजागर करने में सफल हुए हैं। भले ही कथाएं पौराणिक हो लेकिन साहित्यकारों ने नवीन दृष्टिकोण के साथ समकालीन समस्याओं को दर्शाया है।

संदर्भ सूची

1. श्रीरामचरितमानस, मझला, सटीक - हनुमानप्रसाद पौद्दार
2. रामकथा कालजयी चेतना - के.सी..सिन्धु, पृ.सं 10

3. आंजनेय जयते - गिरिराज किशोर, पृ.सं. 18
4. वही - पृ.सं - 86
5. मैं जनक नंदिनी - आशा प्रभात, पृ.सं. 15-16
6. वही - 320